पूज्य लालचंदभाई के प्रवचन
श्री समयसार कलश २७१
प्रवच रत्नाकर भाग ११, पृष्ट ५७१-५७७
राजकोट, सितंबर-अक्टूबर १९९०
प्रवचन LA ३९५

दूसरों का तो नहीं, एक। शास्त्र में भी आता है, मैं कहता हूँ उससे अलग बात। अभी जो कहना चाहता हूँ उससे अलग बात शास्त्र में से आती है, शास्त्र में, तो तुम उसे व्यवहारनय गिनकर असत्यार्थ जानोगे , तो तुम्हारा काम होगा। मैं आपको एक ऐसी बात करना चाहता हूं। यह दूसरा पाठ चलता है, इसलिए पहले पाठ की बात जरा कर लेते हैं ।

आत्मा ज्ञायक है, ज्ञानमय है, केवल जाननेवाला-जाननेवाला-जाननेवाला-जाननेवाला, केवल जाननेवाला है, वह करनेवाला नहीं है। कोई कहे आत्मा राग को करता है तो मानना नहीं। कोई ऐसा कहे कि सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र के परिणाम को करता है तो भी मानना नहीं। कोई ऐसा कहे कि मोक्ष को करता है आत्मा तो मानना मत। जाननहार है।

इतना जरूर है कि राग होता है तब तक राग होता है। वीतरागभाव होता है तो वीतरागभाव होता है। मोक्ष होता है तो मोक्ष होता है। परिणाम होने योग्य होते हैं, उनका निषेध नहीं है। परिणाम तो अपने स्वकाल में अपने स्व अवसर पर जब उनका काल हो, तब परिणाम तो हुआ ही करेंगे। परिणाम का निषेध नहीं है परंतु परिणाम को मैं करता हूँ, वह निकाल देना। स्वतंत्ररूप से स्वयं हुआ ही करते हैं परिणाम। परिणाम को कोई करता भी नहीं है और परिणाम को कोई रोकता भी नहीं है और परिणाम को कोई टालता भी नहीं है। परिणाम तो होते रहेंगे, अनादि अनंत होते रहेंगे।

अज्ञान दशा में मिथ्यात्व होगा, भले होवे । सम्यग्दर्शन हुआ, सम्यग्दर्शन हो, भले हो। शुक्लध्यान की श्रेणी आयी, भले आयी। अरिहंत दशा प्रगट हो गई, भले हुई। सिद्ध अवस्था मुझे प्रगट हो गई, भले हुई। समझ में आया?

परिणाम तो होते ही रहेंगे। परिणाम को रोकने का हमें अधिकार भी नहीं है। यदि हमें करने का अधिकार नहीं है तो टालने का अधिकार या रोकने का क्या अधिकार है? इसलिए मैं तो जाननेवाला हूँ, करनेवाला नहीं। समझ गये? वह पहला जो पाठ है, वह पहला पाठ यदि तुम्हारा पक्का होगा, तो यह दवा तुम्हें लागू पड़ेगी। यदि कर्तापने का शल्य अंदर में पड़ा होगा तो, यह नहीं, बैठेगी ही नहीं यह बात। ज्ञाता के पक्ष में आओगे तो तुम्हें बैठेगी। कर्ता के पक्ष में हो तो यह बात बैठनेवाली नहीं है, समझ गये?

यह अमृत है। यह जो है न यह, गुरुदेव का व्याख्यान अमृत है । जामन है । दूध कढ़ गया हो और जामन डालो तो दही जमती है और मक्खन होकर घी निकलता है। लेकिन पानी को चाहे जितना उबालो और फिर उसमें जामन डालो तो दही होती है? समझ गये? उसको बिलोने पर मक्खन नहीं

निकलेगा।

ज्ञाता के पक्ष में आने के बाद ज्ञाता ही हूँ, केवल। केवल जाननहार हूँ, कथंचित् कर्ता और कथंचित् ज्ञाता ऐसा मेरा स्वरूप नहीं है। केवल जाननहार हूँ, बस! परिणाम होते हैं उनका निषेध नहीं है, लेकिन मैं करता हूँ उसका निषेध है। नवतत्व होते हैं, भगवान ने कहे हैं, मुझे पता है। नवतत्व अपने स्वकाल में होते हैं और होंगे, कितने ही हो गये हैं और कितने ही भविष्य में होंगे। समझ में आया इसमें कुछ? समझ में आ गया न? कितने ही हो रहे हैं और कितने ही होंगे भविष्य में।

मुमुक्षुः- वह मोक्ष की पर्याय भी...

उत्तरः- होगी, वह मोक्ष की पर्याय होगी, वह मुझे पता है। वह मुझे पता है। लेकिन वह मोक्ष की पर्याय होगी तब मैं करूँगा (ऐसा नहीं है।)

मुमुक्षुः- ऐसा नहीं है।

उत्तरः- ऐसा नहीं है। आयेगी ही नहीं (कि मैं करता हूँ)। आज से निर्णय कर लो, समझ गये?

मुमुक्षुः- इस जीव के भाव में जो गूँथ गया है कि मैं सम्यग्दर्शन करूँ, (मुझे) करना है...

उत्तरः- वह गलत है।

मुमुक्षुः- बड़ी भूल है।

उत्तरः- बड़ी भूल है। साधारण भूल नहीं है। जो सम्यग्दर्शन को करने की भावना भाता है वह मिथ्यात्व को करने की भावना में पड़ा है। वह तो विकल्प को करता है। सम्यग्दर्शन कहाँ हुआ? सम्यग्दर्शन मुझे करना है- ऐसा विकल्प आया न, हें? वह तो विकल्प का कर्ता हो गया। मोक्ष को मुझे.... करना मेरे स्वभाव में है ही नहीं। पहला पाठ मैंने यहाँ कहा तुम्हें कि देव आकर कहें तो भी मानना मत। समझ गये?

मुमुक्षुः- करना तो किसी भी प्रकार से (नहीं)। चाहे जो भी हो।

उत्तरः- बस! मैं तो ज्ञाता, जाननहार हूँ और परिणाम हुआ करते हैं। परिणाम होने योग्य होते हैं उसका मैं निषेध नहीं करता। किन्तु मेरे से होते हैं और मैं उनका स्वामी हूँ और मैं उन्हें करता हूँ, (ऐसा) स्वरूप में नहीं है, (ऐसा) अनुभव में दिखता नहीं है। अनुभवी जीवों को ऐसा अनुभव में दिखता नहीं है। अज्ञानी जीव को दिखता है, तो देखो। वह तो मरनेवाला है कर्ताबुद्धि से, दूसरा क्या? आहाहा! इसलिए पहला पाठ।

मैं जयपुर गया न इस बार , लगभग दो हजार लोग थे शिविर में। तब कहा कि सर्वज्ञ भगवान के आगम में छह महीने का कोर्स (course) कहा है। अधिक से अधिक छह महीने में जीव सम्यक् प्राप्त कर ले। यदि रुचिपूर्वक पुरुषार्थ उठाये तो छह महीने में प्राप्त करे, ऐसा आगम का वचन है। अब उन छह महीने के मैं दो भाग करता हूँ। तीन महीने और दूसरे तीन महीने। पहले तीन महीने का कोर्स ऐसा है कि मैं ज्ञाता हूँ, जाननहार हूँ, करनेवाला नहीं हूँ। वह तीन महीने का कोर्स पक्का कर लो। और वह तीन महीनों का कोर्स पक्का हो जाए और उसमें यदि पास हो गये तो फिर दूसरे तीन महीनों में आओ, आहाहा! कि मुझे क्या जानने में आता है? कि परिणाम जानने में नहीं आते। होने योग्य परिणाम होते हैं ऐसा कहा, जाना मैंने, लेकिन करता नहीं हूं ऐसा तो जाना। किन्तु अब मैं जानता भी

नहीं हूं, वह दूसरा पाठ है, तीन महीने का यह।

मुमुक्षुः- पहले कर्ता छोड़ा, फिर जानना भी छोड़ा। सीधा अभेद, अभेद की दृष्टि में आ गया।

उत्तरः- अभेद की दृष्टि में। ख्याल आ गया। नीलम बहन कहती थी , तुम्हारे जाने के बाद कि बहन अभ्यासी लगती हैं। उनको तो परिचय नहीं है न? उनका तो पहला परिचय है, मुझे तो परिचय है। इसलिए मैंने कहा तेरी बात सत्य है।

मुमुक्षुः- सारा आपश्री का प्रताप है।

उत्तरः- हें?

मुमुक्षुः- पहले कुछ , आप आये उससे पहले कुछ भी नहीं जानती थी।

उत्तरः- हाँ, जानती नहीं थी।

मुमुक्षुः- कुछ भी सामान्य क्या, विशेष क्या, कुछ पता ही नहीं था।

उत्तरः- कुछ पता नहीं था। आहाहा! वह तो जाना तो तुमने स्वयं से ही। मैं तो निमित्त मात्र, ऐसा।

मुमुक्षुः- फिर भी वह आपकी कृपा।

उत्तरः- ठीक है, हाँ, वह तो मन में रहता ही है न? इतना तो रहे ही न?

मुमुक्षुः- गुरुदेव को तो प्रत्यक्ष देखा नहीं है। आपश्री ही हमारे तो गुरु हो।

उत्तरः- यह मूल बात, नींव की बात है। वरना लोग पत्ते तोड़ने में चढ़ गये हैं। जड़ें जीवित रखे, (और सिर्फ) पत्ते तोड़े तो फिर से वृक्ष हरा हो जायेगा। पत्ते तोड़-तोड़कर फेंक देवे..।

मुमुक्षुः- मूल में ही भूल हो...

उत्तरः- मूल में ही भूल हो तो कहाँ से निकले।

मुमुक्षुः- पुनः पल्लवित हो जाता है।

उत्तरः- पुनः पल्लवित हो जाता है वृक्ष। इसलिए एक मुख्य चीज पहली , तीन महीने का कोर्स है कि मैं तो जाननहार हूँ। आहाहा! परंतु किसके जैसा जाननहार? जैसे सिद्ध भगवान जाननहार, उनके जैसा जाननहार हों! उनमें और मेरे में कुछ अंतर नहीं है। उनका जो जाननहार स्वभाव ऐसा ही मेरा स्वभाव जाननहार है। वे यदि कुछ नहीं करते तो मैं भी करनेवाला नहीं हूं, आहाहा! इसप्रकार पहले अकर्ता का पाठ-अभोक्ता का पाठ, वह तुमने जो पुस्तक छपवाई है न? तुम्हारे ससुराल के निमित्त से, उसमें ही है यह बात। तुम्हारे पिताजी और माताजी का फोटो है न? भिजवाया है मुझे। मिल गई पुस्तक? उसमें ही है यह। समझ गये?

अर्थात् यह वस्तु का मूल स्वभाव है। आत्मा जानवाला है, करनेवाला नहीं है, बस! वह पहला पाठ पक्का हो गया? शास्त्र में आयेगा कि आत्मा अशुद्धनिश्चयनय से राग को करता है। एक देश शुद्धनिश्चय से संवर, निर्जरा और मोक्ष को करता है। वह सब आयेगा, परंतु वे व्यवहारनय के कथन हैं, उनको गौण करना, गौण करके अभूतार्थ कर देना। कथन आयेंगे सभी, कथन तो आते हैं उसमें क्या? आते हैं, कथन तो आते हैं। क्योंकि परिणमता है न, वह आत्मा? तो परिणमता है, इसलिए उपचार से कर्ता कहा जाता है। उपचार से कर्ता कहा है, व्यवहार से। वास्तव में कर्ता नहीं है, जाननहार है। जो

जानता है वह करता नहीं है और करता है वह जानता नहीं है। यह मुख्य बात है।

फिर यह दूसरा पाठ लागू पड़ेगा, दवा (औषधि)। यदि तुम शल्य रखोगे कि परिणाम को मैं करता हूँ, सम्यग्दर्शन मुझे कर देना है..। तुम जाननेवाले हो या करनेवाले हो? तुम तो मार्ग भूल गए हो। तुम्हें धर्म करना है? या धर्मी मैं हूँ, धर्मी को जाननेवाला हूँ, ऐसा लो न? धर्मी अर्थात् अनंत गुणों का पिंड, धर्मी। और उसका जाननेवाला हूँ, करनेवाला नहीं, ऐसा।

मुमुक्षुः- फिर आनंद तो सहज ही आ जाता है।

उत्तरः- सहज आयेगा। आया ही समझो। यदि तुम प्राप्त करने जाओगे तो नहीं आयेगा।

मुमुक्षुः- नहीं आयेगा। तो-तो वह कर्ताबुद्धि हो गई। करता हूँ। चाहिए आनंद।

उत्तरः- मुझे चाहिए आनंद। ये कहते हैं , लंदन में रहकर ऐसा अभ्यास! मैंने कहा आत्मा हैं न? लंदन में कहाँ रहते हैं? आत्मा में रहते हैं। और गुरुदेव का सभी साहित्य, टेप, ग्यारह भाग, सभी का अध्ययन करते हैं। मैंने कहा सातवे भाग तक उन लोगों ने पढ़ा है। और घर में भी अध्ययन करते हैं। अभ्यास तो करते हैं, और अब अभ्यास बढ़ जायेगा। बहुत निवृत्त होकर, यह अच्छी बात है, बहुत फर्क पड़ेगा, अच्छा है। बहुत जीव प्राप्त करेंगे गुरुदेव के निमित्त से। ऐसा बाहर आया है तत्व, तत्व बाहर आया है। नहीं था, अंधेरा था एकदम। एकदम अंधेरा। शास्त्रों में था, दिगंबर शास्त्रों में, लेकिन दिगंबर कोई जानते नहीं थे।

मुमुक्षुः- यह बात ही कहाँ थी?

उत्तरः- बाहर ही नहीं आयी। शास्त्रों में पड़ी थी, कोई जानता नहीं था, दृष्टि नहीं गई किसी की, अनुभव नहीं हुआ किसी को। अनुभवी के सिवाय कोई नहीं कह सकता। जिसने आत्मा जाना वह आत्मा का स्वरूप कह सकता है। आत्मा जाना नहीं वह आत्मा का स्वरूप.. क्या कह सके? वह तो कर्ता-कर्ता-कर्ता ही माना करता है। ऐसे करो, ऐसे करो, ऐसे करो, इतना करो, क्रिया करो। चलो! इतनी बात मन में आयी सुबह से, तुम्हें कह दूँ। वह कह दिया है। क्योंकि दो पाठ हैं न?

मुमुक्षुः- हाँ! दो ही हैं। आप पहले से मिले तब से ही कहा था कि दो ही पाठ हैं।

मुमुक्षुः- पहले ही शुरूआत की थी पहले पाठ की आपने।

मुमुक्षुः- लेकिन इस प्रकार तीन-तीन महीने की अवधि?

उत्तरः- ज्यादा में ज्यादा, तीन महीने की अवधि ज्यादा में ज्यादा हों! हो जाये तो आधे घंटे में (हो जाये)। यह तो आचार्य भगवान ने उदारता रखी कि अधिक से अधिक छह महीने में तुझे सम्यग्दर्शन होगा, समझ गये? वरना कोई तो अंतर्मुहूर्त में प्राप्त कर ले। उसमें क्या है? यह घर की बात है न? अपने दर्शन करने हैं, दूसरा तो कुछ नहीं करना । अपने दर्शन करने हैं, (वह) भूल गया है। ऐसे-ऐसे (पर के सामने) दर्शन करने जाता है। इसलिए अपने दर्शन करने हैं, दूसरा कुछ नहीं है।

मुमुक्षुः- अंधा है, इसलिए देखता नहीं है।

उत्तरः- है। जानने में आता है, दिखता है, आहाहा! दिख रहा है।

मुमुक्षुः- हाजराहजूर है।

उत्तरः- हाजराहजूर। हमारे देश में हाजराहजूर कहते हैं समझ गये? प्रत्यक्ष दिखता है, है।

(जागता हुआ) जीव खड़ा है। बेनश्री कहती हैं न? (जागता) जीव खड़ा है। अर्थात् है, है। है और जानने में न आये? है तो जानने में आये न ? जानने में क्यों न आए ? दूसरा पैराग्राफ है न? चौथा पेज। दूसरा पैराग्राफ।

मुमुक्षुः- नहीं, पहला ही चलता है।

उत्तरः- पहला शुरू करूँ? ठीक।

मुमुक्षुः- पहला आधा हुआ है।

उत्तरः- ठीक। फिर से, चौथा पेज पहला पैराग्राफ।

'ज्ञेय के आकाररूप होता हुआ ज्ञान की कल्लोलरूप से परिणमित-' इतना पाठ मूल में है। परपदार्थ ज्ञेय है, उसके आकाररूप अर्थात् उसका स्वरूप इसमें प्रतिभासित होता है और उसरूप ज्ञान का परिणमन स्वतंत्रपने यहाँ होता है। उसे ज्ञान की कल्लोलें अर्थात् ज्ञान की पर्याय कहने में आता है। अब, वह जो कहा कि ज्ञेय ज्ञान में जानने में आते हैं, ऐसी जो ज्ञान की पर्याय होती है, ऐसा जो शास्त्र में यह पाठ है, शास्त्र का, शास्त्र का वाक्य है। ऐसा जो कहा है, वह व्यवहारनय से कहा है। उसे जाननेरूप परिणमता है - ज्ञान, ऐसा जो कहा है, है शास्त्र का वचन यह। अब गुरुदेव उसका अर्थ करते हैं कि वह व्यवहार का कथन है।

ज्ञेय को जाननेरूप ज्ञान परिणमता है, ज्ञेय के संबंधवाला ज्ञान, वह व्यवहार से कहा हों! यदि तुम निश्चय मान लो तो भूल हो गई, बड़ी भूल हो गई। तो तुम वहाँ (पर में) ही चिपक जाओगे, उसे (पर को) जानने में रुक जाओगे। (पर को) करने में से निकले, तो रुके (पर को) जानने में। जानना तो चाहिए न? केवली भगवान लोकालोक को जानते हैं और जाननेवाला हूँ न मैं?

मुमुक्षुः- जानने का स्वभाव है न मेरा।

उत्तरः- जानने का स्वभाव है, तो जानूं तो सही न ? यह दुकान मेरी या अलका मेरी, ऐसा नहीं लेकिन अलका है ऐसा तो जानूं न? इतना तो जानना चाहिये न?

मुमुक्षुः- जानने का स्वभाव कहा, मर गया।

उत्तरः- स्वभाव कहा, मर गया। आत्मा है न? आहाहा! शास्त्र में पाठ तो बहुत आते हैं। लेख तो अनेक आते हैं। उसका स्पष्टीकरण गुरुदेव करते हैं, देखो! इस शास्त्र में ऐसा आया है, कि ज्ञेय ज्ञान में ज्ञात हों ऐसी ज्ञान की पर्यायरूप आत्मा परिणमता है। कल्लोल अर्थात् अपनी पर्याय। जिसमें ज्ञेय निमित्त है, ज्ञेय निमित्त और ज्ञान की पर्याय नैमित्तिक। वह ज्ञेय और यह ज्ञान, उस संबंधित। उससे संबंधित ज्ञान, आत्मा संबंधित नहीं।

मुमुक्षुः- ज्ञेय संबंधित।

उत्तरः- ज्ञेय से संबंधित ज्ञान। कहते हैं कि वह वाक्य व्यवहार का है, तू उसे सत्य मत मानना । हाँ! ज्ञान आत्मा को जानता है वह बात सत्य मानना। लेकिन इसे (पर को) जानता है वह व्यवहार है। व्यवहार कहा हों! ध्यान रखना! यह व्यवहारनय का कथन है हों! व्यवहारनय का कथन अर्थात् झूठा, ऐसा है नहीं।

मुमुक्षुः- जो नहीं है उसकी प्रसिद्धि करता है।

उत्तर:- नहीं है उसकी प्रसिद्धि करता है, बस, उसका नाम व्यवहार।

मुमुक्षु:- नहीं है अर्थात् अपने स्वभाव में नहीं है?

उत्तर:- अपने स्वभाव में उसे जानना नहीं है।

मुमुक्षु:- उसके स्थान पर वह भले रहा।

उत्तर:- वह भले रहा, परंतु उसे जानने का मेरा स्वभाव नहीं है। क्योंकि उसे जानने से (आत्मा के) साध्य की सिद्धि नहीं होती। आत्मदर्शन अटक जाता है, आत्मदर्शन अटकता है मुझे। बाधा पहुँचती है मुझे, घात होता है मेरे आत्मा का उसे (पर को) जानने में रुकूं तो। वह रुका है अनंतकाल से पर को जानने में, आत्मा को नहीं जाना। वह भूल हो गई। इस भूल को निकालने के लिए यह पाठ है।

यह व्यवहार से कहा है हों। वस्तुतः तो छह द्रव्यरूप ज्ञेयों का जैसा स्वरूप है, उनको जानने के विशेषरूप से परिणमना ज्ञान की स्वयं की दशा है । उसके (पर के) कारण से नहीं परंतु अपनी दशा ही ऐसी है कि उसमें जानने में आ जाता है। अपने को जानने पर उसमें वह (पर) जानने में आ जाता है ऐसी स्वच्छता है परंतु उसे जानता है ऐसा रहने देना। वह भले जानने में आये, वह भले जानने में आये, वह भले प्रतिभासित हो। हें ! वह भले झलक जाये, कोई आपत्ति नहीं। तो उसका (पर का) लक्ष मत करना। तेरी स्वच्छता है दर्पण की तरह और वह झलकेगा, भले ही झलके , कोई बात नहीं, तेरा ज्ञान मैला नहीं होगा। किन्तु वह झलकता है उसमें लक्ष करेगा तू कि, आहाहा! इसे (पर को) मैं जानता हूँ तो गया दुनियाँ में से।

वस्तुतः तो छह द्रव्यरूप ज्ञेयों का जैसा स्वरूप है, उनको जानने के विशेषरूप से परिणमना ज्ञान की स्वयं की दशा है , और वह ज्ञान की स्वयं की सामर्थ्य से है। वह (पर) जो जानने में आता है वह अपनी स्वच्छत्व शक्ति है, सामर्थ्य है इसलिए जानने में आता है। जैसे दर्पण में ज्ञात होता है, अग्नि ज्ञात होती है उस प्रकार, मोर ज्ञात होता है उस प्रकार, आहाहा!

'ज्ञेय के आकाररूप होता हुआ ज्ञान' देखो। इनवर्टेड कोमा (in-to-comma) किये हैं। **'ज्ञेय के आकाररूप होता हुआ ज्ञान-'** कोमा किये हैं न दो। चिन्ह के ऊपर वाक्य! **यह तो कथनमात्र है;** संध्याबेन! कहनेमात्र है । मैं इसे (पर को) जानता हूँ, यह मेरे ज्ञान में ज्ञात होता है, मैं इसे जानता हूँ और यह मेरे ज्ञान में ज्ञात होता है, जानता हूँ और ज्ञात होता है, वह कहनेमात्र है। आहाहा! कथनमात्र है। एक वाक्य तो बहुत है। एक वाक्य तो बहुत हो जाता है। ज्ञेय से व्यावृत्त हो जाये , वापस मुड़ जाये और जाननहार को जानने लगे , आहाहा! कथनमात्र है! ये कोई महापुरुष पके हैं! हमारे लिए ही जैसे उन्होंने यहाँ जन्म लिया हो ऐसा लगता है। अपना काल पक गया था न? अपना काल पका तो वैसा निमित्त तो होवे ही न। और समर्थ निमित्त, तीर्थंकर का द्रव्य मिला हमें, ऐसा! साधारण सम्यग्दृष्टि या पाँचवे गुणस्थानवाले या मुनिराज भी मिलते हैं। लेकिन ये तो समर्थ पुरुष पके, समझ गये? जबरदस्त! आहाहा!

कथनमात्र है। 'ज्ञेय के आकाररूप होता हुआ ज्ञान', बहन! **'ज्ञेय के आकाररूप होता हुआ ज्ञान' - वह तो कथनमात्र है।** 'ज्ञेय मेरे' ऐसा तो है नहीं, लेकिन ज्ञेयों के आकाररूप होता हुआ मेरा ज्ञान, यह ज्ञान, कहने मात्र, कथनमात्र है, आहाहा!

मुमुक्षुः- ज्ञेयों को जाननेवाला ज्ञान।

उत्तरः- हाँ, ज्ञेय जिसमें जानने में आते हैं, ऐसा जो ज्ञान, कहनेमात्र है। वे जानने में आते हैं और मैं जानता हूँ।

मुमुक्षुः- ऐसा नहीं है।

उत्तरः- मेरा उनके साथ ऐसा व्यवहार नहीं है। मेरा व्यवहार पर के साथ नहीं होता, एक जाति में व्यवहार होता है, पुत्र-पुत्री के विवाह में। आजकल अलग बात है। यह तो बात करता हूँ पहले के समय में तो एक जाति में थे न, विवाह के संबंध। ऐसे ही यह जाति दूसरी है, छह द्रव्य, मेरी जाति कहाँ है? मेरा व्यवहार मेरे पास है। मैं ज्ञान और मेरा आत्मा ज्ञायक। जाननहार को जानूँ वह व्यवहार है, एक जाति में। विजाति में-विजाति में व्यवहार भी नहीं है। निश्चय तो नहीं, व्यवहार भी नहीं है। राग को जानना मेरा धरम नहीं है। करना तो धरम नहीं है।

मुमुक्षुः- लेकिन जानना भी नहीं।

उत्तरः- क्योंकि जाति अलग है उसकी।

मुमुक्षुः- ज्ञान और ज्ञेय की जाति अलग नहीं होती।

उत्तरः- नहीं होती। और ऐसा व्यवहार नहीं होता आत्मा में।

मुमुक्षुः- भिन्न जाति के साथ ज्ञान-ज्ञेय का व्यवहार नहीं होता।

उत्तरः- नहीं होता, ऐसा कहते हैं। ज्ञान-ज्ञेय का भेद इतना अंदर रख तो व्यवहार होता है, अभेद कर तो निश्चय है। तुझे व्यवहार और निश्चय चाहिये हो तो अंदर है, अंदर है। मैं ज्ञान और मैं ज्ञेय, ये व्यवहार हो गया। और अनुभव में मैं ही ज्ञान और मैं ही ज्ञेय, एकाकार हो गया, वह निश्चय। तेरा ज्ञेय तो यहाँ (अंदर में) है, यहाँ देख न! वहाँ (बाहर में) कहाँ तेरा ज्ञेय है?

मुमुक्षुः- इतने में ही क्रीड़ा करो कि ज्ञान और ज्ञेय अभेद, और व्यवहार यह ही ज्ञान और ज्ञेय।

उत्तरः- यह भेद करो तो व्यवहार, अभेद करो तो निश्चय। अभेद करो तो अनुभव, बस! निश्चय-व्यवहार सब अंदर है, आहाहा! बाहर में कुछ नहीं है।

मुमुक्षुः- इस जीव को तो भी अनादि से बाहर का ही (लक्ष) है।

उत्तरः- हाँ! बाहर का करना और बाहर का जानना-देखना। बस! वह रह गया।

मुमुक्षुः- और यहाँ आया तो भी पर के जानने में रहा।

उत्तरः- यहाँ आया गुरुदेव के पास, तो जानना तो स्वभाव है न? जानना तो है न? अपने मुमुक्षु बहुत से अभी मेरे सामने दलीलें करते हैं, आती हैं, मेरे सामने तो आयेंगी ही न वे तो? भले आयें, कोई बात नहीं। लेकिन मैं कहता हूँ कि तुम गुरुदेव को मानो न? मैं कहाँ कहता हूँ? यह तो अभी टेप है न? फिर टेप हैं, तुम गुरुदेव के ही शब्द (सुनो), ये गुरुदेव ही बोलते हैं ऐसा तुम्हें विश्वास होगा।

मुमुक्षुः- तर्क से ऐसे अनुमान करे तो भी बैठे कि- नहीं ऐसा ही है।

उत्तरः- ऐसा ही है। अनुमान करे तो भी बैठ जाये। बैठे, लायक जीव को बैठने लगती है। हकार आता है अंदर में से। गुरुदेव कहते थे एकबार हाँ तो कर, तो हालत हो जायेगी। हालत हो जायेगी बहन! आहाहा!

मुमुक्षुः- और ऐसा ही है न? हाँ करे तो उसका काम हो जायेगा।

उत्तरः- काम हो जायेगा। ना करे तो वह तो रह जायेगा।

'ज्ञेय के आकाररूप होता हुआ ज्ञान' - वह तो कथनमात्र है। आत्मा ज्ञान और ज्ञेय को जानता है, वह तो कहनेमात्र है। कथनमात्र है, आहाहा! कैसे शब्द हैं! आहाहा! **वस्तुतः ज्ञान तो ज्ञानाकार ही है, ज्ञेयाकार है ही नहीं,** आहाहा! (ज्ञान) ज्ञानाकार ही है, ज्ञेयाकार है ही नहीं। ज्ञेयों को नहीं जानता, अपने आत्मा को जानता है। ज्ञान, ज्ञान को जानता है, ज्ञान ज्ञायक को जानता है। ज्ञानाकार है किन्तु ज्ञेयाकार नहीं है। आहाहा! टंकोत्कीर्ण, कोहिनूर के हीरे हैं। कोहिनूर के हीरे, आहाहा! जौहरी हो न? उसका ध्यान जाता है। ओहोहो! मैं इसका (पर का) जाननेवाला नहीं हूं, जाननहार जानने में आता है, मुझे तो जाननहार जानने में आता है। आजा न अंदर। जाननहार जानने में आता है। थोड़ी देर के लिए तो आ! मजा आयेगा तुझे।

मुमुक्षुः- फिर निकलने का मन ही नहीं होगा।

उत्तरः- ऐसा ही है हों! फिर निकले कौन उसमें से?

मुमुक्षुः- एकबार स्वाद चख ले फिर..

उत्तरः- फिर छोड़े कौन उसे?

ज्ञानाकार ही है, ज्ञेयाकार है ही नहीं। अस्ति-नास्ति अनेकांत किया। ज्ञानाकार है और ज्ञेयाकार नहीं है, ऐसा। **समझ में आया? आहाहा! यहाँ कहते हैं कि यह ज्ञान की पर्याय और मेरे द्रव्य-गुण (द्रव्य-गुण-पर्याय) तीनों मिलाकर मैं ज्ञेय हूँ।** ज्ञेय यहाँ (अंदर में) है, ज्ञेय वहाँ (बाहर में) कहाँ है? तेरा ज्ञेय तो यहाँ है, आहाहा! द्रव्य, गुण और पर्याय वह तेरा ज्ञेय है, उसको जान न! आहाहा! **ज्ञेय हूँ। ज्ञान मैं, ज्ञाता मैं और ज्ञेय यह लोकालोक -ऐसा किसने कहा?** ज्ञान मैं, ज्ञाता मैं - दोनों यहाँ रखे। ज्ञाता और ज्ञान दो को (यहाँ) रखा और ज्ञेय कहाँ स्थापित किया? (बाहर में)।

मुमुक्षुः- बाहर में ज्ञेय स्थाप दिया।

उत्तरः- वह भूल हो गई। अनादि की यह भूल है। यह भूल है, यह इकाई है, यह भूल जाये तो काम हो जाये, बस! यह दूसरा पाठ ही है। पाठ दो ही हैं। लंदन में भी दो पाठ की बात की थी।

मुमुक्षुः- वैसे बहुत सरल है। यह सब व्यर्थ पढ़ना और इतना सब किया, उसका।

उत्तरः- शास्त्र पढ़ना बंद हो जाये। अटक न रहे, छूट जाये वह सब। यहाँ आ जाये। यह पढ़ते ही हर्ष आ जाता है, पढ़ते ही।

मुमुक्षुः- विचार करने पर भी ऐसे अंदर से उमंग आती है।

उत्तरः- हाँ, उमंग आ जाती है। अपनी बात है न? अपनी बात है और अपनी भूल दिखाई दी ना अपने को? वह भूल को जाने तो भूल को निकाल दे कि यह मेरी भूल हुई।

मुमुक्षुः- पर की आकुलता तो कहीं भाग....

उत्तरः- (हाँ)।

अब देखो अच्छी बात करते हैं। **ज्ञान मैं और ज्ञाता मैं**, वे दो रखे यहाँ। **और ज्ञेय यह लोकालोक- ऐसा किसने कहा?** किसने कही यह बात? यह तो है ही नहीं कहीं बात। गुरुदेव कहते

हैं किसने कही यह बात? ऐसा तो वस्तु स्वरूप नहीं है। मैं ज्ञान और मैं ज्ञाता और ये लोकालोक मेरे ज्ञेय- ऐसा किसने कहा? ऐसा है नहीं।

मुमुक्षुः- किसके आधार पर ऐसी घोषणा की गुरुदेव ने?

उत्तरः- कैसी घोषणा लेकिन! टंकोत्कीर्ण, ढिंढोरा पीटकर! ढिंढोरा पीटकर की है बात!

मुमुक्षुः- किसके आधार से? विचार करें , जो यह बात कोई जानता नहीं था, मान्य न रखें ऐसी बात उन्होंने जाहिर की है।

उत्तरः- कोई मान्य न रखे, हों! आज भी नहीं रखते हैं, लेकिन लायक हो, वह रखे।

मुमुक्षुः- तब तो कोई मान्य न रखे! ऐसी बात करने की हिम्मत होना वह भी गजब है।

उत्तरः- हिम्मत हों! अनुभवी की हिम्मत होती है। अनुभव था न उनको? इसलिए हिम्मत हो गई। माने या न माने कोई।

मुमुक्षुः- वस्तु तो यह ही है। मानो या न मानो।

उत्तरः- तुम्हारी मर्जी, स्वतंत्र हो, बस! आहाहा! **ऐसा किसने कहा?** आत्मा ज्ञाता है और लोकालोक ज्ञेय है - ऐसा किसने कहा? कि भाई! सर्वज्ञ के आगम में आता है न? कि वह व्यवहारनय से कहा है, झूठा मानना, व्यवहार का कथन है। दो बात आज कही, कि देव आये तो भी तुम मानना मत। उसके अंदर सभी विद्वान (और) सब आ गये। कहने का मेरा भावार्थ यह था, समझ गये? और दूसरा यह था कि आगम में भी आयेगा कि केवली भगवान लोकालोक को व्यवहार से जानते हैं, यह आयेगा। हमें मान्य है, व्यवहारनय से जो आयेगा, ठीक है लेकिन निश्चयनय से देखा जाए तो वह झूठी बात है। हमारे केवली भगवान तो आत्मा को जानते हैं। केवली केवलज्ञान के द्वारा आत्मा को ही जानते हैं।

केवल निज स्वभाव का, अखंड वर्ते ज्ञान,

कहिये केवलज्ञान वह , देह तदपि निर्वाण, श्रीमद् का वाक्य है यह, अनुभवी का वाक्य है। केवली की व्याख्या की उन्होंने। उन्हें पता था कि लोकालोक को जाने वह केवली, ये (व्याख्या) सभी चलाते हैं। समझ गये? परंतु ऐसा नहीं है। केवली तो अपने आत्मा को अंदर में डूबकर जानते हैं, आहाहा! वे ऐसे-ऐसे (बाहर) जानने जाते हैं ? ऐसे-ऐसे (बाहर) जानते हैं कभी?

मुमुक्षुः- अभेद है।

उत्तरः- हाँ! अभेद है, भेद ही करते नहीं हैं केवलज्ञान और आत्मा का। भेद पड़े तो वह वाक्य आये लेकिन भेद ही पड़ता नहीं। आहाहा! यह किसने कहा? गजब की हों! गजब की हिम्मत। कौन कहता है कि लोकालोक को जानता है ज्ञान? झूठी बात है। लेकिन झूठी बात (है ऐसा) कहोगे तो तुम केवली को मानते नहीं हो, ऐसा तुम्हें कहेंगे (लोग)। हम ही केवली को मानते हैं, तू नहीं मानता। हम केवली को मानते हैं क्योंकि केवलज्ञान के द्वारा आत्मा को जानते हैं, ऐसा हम कहते हैं।

मुमुक्षुः- केवली, केवली को न माने?

उत्तरः- कौन जाने! केवली है, केवल आत्मा को जानता है वह केवली है-श्रुतकेवली है। श्रुतकेवली है वह केवली को न माने? वह ही मानता है। अज्ञानी कहाँ मानता है? अज्ञानी केवली को

मानता ही नहीं है।

किसने कहा? परमार्थ से ऐसा नहीं है, आहाहा! वास्तव में ऐसा नहीं है, आहाहा! **ऐसा कहना व्यवहार है।** केवली का ज्ञान लोकालोक को जानता है, **ऐसा कहना व्यवहार है, आहाहा! धर्मी के अंतर की खुमारी तो देखो!** यह अंतर की खुमारी आयी कि 'आत्मा ज्ञाता है और लोकालोक ज्ञेय है, ऐसा किसने कहा?' यह देखो तो सही, धर्मी की खुमारी! अंदर निर्विकल्प ध्यान में से बाहर आकर यह वाणी निकली है।

मुमुक्षुः- तब यह वाणी निकलती है, सही है !

उत्तरः- (हाँ!) **खुमारी तो देखो!** कहते हैं- **जगत में मैं एक ही हूँ। जगत में अन्य वस्तुएं हों तो भले हों,** उसमें कहाँ मना है? हों तो भले हों, छह द्रव्य हैं, अनंत जीव, अनंत पुद्गल परमाणु, कौन मना करता है? हों तो हों।

मुमुक्षुः- सब हैं। हों तो हों! मैं तो एक हूँ।

उत्तरः- हों तो हों! मैं तो एक हूँ, यहाँ (आत्मा में)। मेरी नजर तो यहाँ (अंदर) है, मेरी नजर (वहाँ) बाहर नहीं है। मेरी नजर तो अंदर में थम गयी है, बस! आहाहा! ज्ञान पलटता नहीं, आहाहा! ज्ञेय पलटते हैं परंतु ज्ञान नहीं पलटता। ज्ञेय अर्थात् क्या? अंदर के जो परिणाम हैं न? वे ज्ञेय हैं, छह द्रव्य ज्ञेय नहीं हैं।

मुमुक्षुः- आपने कहा न अपनी कल्लोलें।

उत्तरः- हाँ कल्लोलें! नीलम समझी न? अपनी कल्लोलें ज्ञेय हैं। हें! इतना पकड़ में आया न? परिणाम जो होते हैं अंदर में, आहाहा! वे ज्ञेय हैं-वे ज्ञेय हैं। वे ज्ञेय तो पलटते हैं। परिणाम आते हैं और जाते हैं, आते हैं और जाते हैं । अब, उनसे संबंधित जो ज्ञान होता है वह तो अज्ञान है। लेकिन जो ज्ञान आत्मा को जानता है, वह पलटता ही नहीं। क्योंकि आत्मा पलटता नहीं, पलटे उसे ज्ञान नहीं कहते। क्योंकि वे तो ज्ञेय पलटते हैं और ज्ञेयों के पीछे-पीछे ज्ञान दौड़ता है। इसे (पर को) जानूँ- इसे जानूँ- इसे जानूँ, अब, इसे जाना-इसे जाना, वह ज्ञान ही नहीं है।

मुमुक्षुः- आपको एक बार और पधारना पड़ेगा एक बार हमारे घर..।

उत्तरः- हें? ऐसा लगता है? लंदन? बुला लेना, एक बार?

मुमुक्षुः- दूसरा कुछ नहीं करेंगे हम बस!

उत्तरः- अपन बैठ जायेंगे सामने सामने। ऐसा न? हम तीन जने।

मुमुक्षुः- जो हमारी भूल है वह भूल तोड़नी है।

मुमुक्षुः- बहन तो इजाजत देंगी न आपको। देंगी न बहन इजाजत ? बापूजी अनुमति देंगे न? हमारे यहाँ आने के लिये।

उत्तरः- आहाहा! **दूसरी चीजें हों तो** भले **हों, परमार्थ से उनके साथ मेरा जानने तक का संबंध नहीं है।** ज्ञाता-ज्ञेय का संबंध तोड़ दिया। कर्ता-कर्म संबंध तो नहीं है परंतु मैं ज्ञाता और यह (पर) ज्ञेय ऐसा जो व्यवहार, उस व्यवहार को तोड़ते हैं। उस व्यवहार को तोड़े तब अंदर में आये, उपयोग अंदर में जाए। मैं इसे (पर को) जानता हूँ, वह ज्ञेय और मैं ज्ञाता (ऐसा नहीं है)। (गुरुदेव ने)

सुबह दोपहर और शाम, आत्मा की ही बात की। एक ही बात की, पैंतालीस-पैंतालीस वर्षों तक, शुरू से अंत तक, पलटे नहीं। विरोध हुआ, हजारों लाखों लोगों का, मेरू डिग जाये लेकिन ज्ञानी नहीं डिगते, आहाहा! कहते थे, तुम्हें फिरना पड़ेगा, यह हमारी बात फिरनेवाली नहीं है , ऐसा कहते थे। चेलेंज हों!

मुमुक्षुः- वस्तु का स्वरूप ही ऐसा होता है, फिर।

उत्तरः- फिर क्या फिरे? वस्तु फिरती है कहीं? वस्तु फिरे तो वस्तु का ज्ञान फिरे। वस्तु जैसी है ऐसी ज्ञान में आ गई और वाणी में ऐसा आता है, बस!

आहाहा! यहाँ क्या कहते हैं? दूसरा पैराग्राफ, अब शुरू होता है। **आहाहा! यहाँ क्या कहते हैं? कि परज्ञेय (परपदार्थों** उसकी व्याख्या करते हैं, परज्ञेय की, **देव-गुरु-शास्त्र, पंचपरमेष्ठी, और व्यवहार रत्नत्रय आदि ज्ञेय** अंदर के परिणाम को ज्ञेय में लिया। वे बाहर के ज्ञेय और व्यवहार रत्नत्रय के परिणाम अंदर के ज्ञेय।

मुमुक्षुः- वहाँ तक ले लिया, व्यवहार रत्नत्रय के (परिणाम)।

उत्तरः- अंदर के, व्यवहार रत्नत्रय के परिणाम भी ज्ञेय में जाते हैं , वे ज्ञान में नहीं आते।

मुमुक्षुः- ज्ञेय में आते हैं, सही है।

उत्तरः- ज्ञेय में आते हैं। आत्मा में तो नहीं आते, किन्तु ज्ञान में भी नहीं आते। वे परज्ञेय में आते हैं। हमारी सुबह बात हुई न? वह यह, आया था। **और व्यवहार रत्नत्रय आदि ज्ञेय) के साथ मेरा ज्ञाता- ज्ञेय संबंध तो दूर ही रहो,** आहाहा! **હું જ્ઞાન ને હું જ્ઞાતા - એવો સંબંધ હોવાનું તો દૂર રહો, मेरा ज्ञाता-ज्ञेय संबंध तो दूर ही रहो, परमार्थ से तो मैं ज्ञेय, मैं ज्ञान, और मैं ज्ञाता - ऐसे तीन भेदरूप भी मैं नहीं हूँ। इन तीनों मय मैं एक ही हूँ ।** ज्ञाता भी मैं, ज्ञेय भी मैं और ज्ञान भी मैं। अंदर के तीन भेद उसने अभेद कर दिए।

मुमुक्षुः- भेद को निकाल दिया।

उत्तरः- भेद को निकाल दिया।

मुमुक्षुः- अभेद में आ गया।

उत्तरः- भेद को निकाल दिया मतलब अभेद में आ गया।

मुमुक्षुः- अभेद हो गया।

उत्तरः- अभेद हो गया, बस! **इन तीनों मय मैं एक ही हूँ। देखो, यह स्वानुभव की दशा!** अनुभवी कहते हैं कि मैं ज्ञान, मैं ज्ञेय और मैं ज्ञाता, ऐसे जो तीन भेद (हों) तब तक अनुभव नहीं होता। इन तीनों का एकपना होवे तो अनुभव होता है। उसका नाम सम्यग्दर्शन-ज्ञान है। यह पुस्तक जो है न, अध्यात्म रत्नत्रय, छपी है न? उसके साथ यह एक बुक बाइंड करा लेना, ऐड (add) कराना, ऐड (add)। है तो उसमें कलश टीका में २७१, लेकिन वह कलश टीका के ऊपर का है, यह समयसार का। इसलिए एक बाइंडिंग करा लेना। लाइफ टाइम पढ़ना, एक पुस्तक हों! लाइफ टाइम।

मुमुक्षुः- अभी जो बात है न वह तो सचोट है।

उत्तरः- दोनों की हाँ आती है-दोनों की हाँ आती है। पहले हमारे भाई की हाँ नहीं आती थी। अब हाँ आने लगी है। मुझे खुशी हुई है। मैं प्रशंसा नहीं करता। प्रशंसा नहीं करता तो भी एक प्रकार से

रुचि जागी है। स्वरूप को समझने की भाई को रुचि जागे और इन गुरु के वचन में हकार आये। समझ गये? उसका काम हो ही जाए, दूसरा कुछ नहीं ।

मुमुक्षुः- रुचि तो जगी जब से बात मान्य हुई.

उत्तरः- तब से।

मुमुक्षुः- लेकिन समय।

उत्तरः- इतना नहीं था अभी उघाड़। अब पकड़ में आता है, सही से, ज्यादा। अच्छी बात है।

मुमुक्षुः- दोनों के लिये अच्छा है। एक दूसरे को ऐसे..।

उत्तरः- हाँ, दोनों के लिये अच्छा है। तुम्हारे लिये भी अच्छा है। एक दूसरे को परस्पर, परस्पर एक आगे और एक पीछे रहे तो मजा नहीं आता। दोनों साथ दौड़ें न? तो मजा आता है। फिर योग्यता के अनुसार कोई जल्दी अरिहंत होवे और फिर कोई देर से। उसमें कोई बात नहीं।

मुमुक्षुः- वह तो सबकी अपनी योग्यता।

मुमुक्षुः- वह तो जो होने का काल है वह होना ही है।

उत्तरः- वह कोई बदलनेवाला नहीं है। उसके साथ हमें संबंध नहीं है।

मुमुक्षुः- लेकिन यह तो एक ही वस्तु जो है उसका निर्णय करना है।

उत्तरः- वह निर्णय करना है। मैं कौन हूँ और कैसा हूँ? बस! इतना निर्णय करना है। उसमें काम होगा। **देखो, यह स्वानुभव की दशा!** ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय अभेद हो गये, ये दशा स्वानुभव की। **मैं ज्ञान,ज्ञाता,ज्ञेय- ऐसे भेदों से भेदरूप नहीं होता**, टुकड़े नहीं होते तीन, समझाये तो। अभेद में भेद करके समझायें, तो वस्तु तो अभेद ही है। खण्ड नहीं होते उसके। **मैं ऐसा अभेद चिन्मात्र आत्मा हूँ।** भेदरूप नहीं होता ऐसा अभेद चिन्मात्र मैं आत्मा हूँ। **मैं ज्ञेय हूँ, मैं ज्ञान हूँ, मैं ज्ञाता हूँ- ऐसे भेदों का उत्पन्न होना तो राग है, विकल्प है।**

मुमुक्षुः- उसे विकल्प कहते हैं।

उत्तरः- मैं इसे (पर को) जानूँ वह मिथ्यात्व का विकल्प (है)। और ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय का भेद करना वह साधक का विकल्प। साधक कहता है विकल्प है उसमें शांति नहीं है, उसमें अशांति है।

मुमुक्षुः- निर्विकल्प चाहिये।

उत्तरः- चाहिये, उसे यह चाहिये।

मुमुक्षुः- क्योंकि उसका जो स्वभाव है उस रूप से टिका रहे...

उत्तरः- हाँ, बस!

मुमुक्षुः- तो सही है। वरना जहाँ तक विकल्प की उत्पत्ति हुई वह दुःख है।

उत्तरः- तब तक दुःख होता है। (यह मैं ज्ञान), यह (मैं) ज्ञेय, यह मैं ज्ञाता, ऐसे तीन भेद दिखते नहीं हैं। भेद होने पर भी भेद दिखते नहीं, दृष्टि अभेद के ऊपर चली जाती है। अभेद ध्येय होता है और अभेद ज्ञेय हो जाता है। अभेद ध्येय में गुणभेद नहीं दिखता और अभेद ज्ञेय हुआ उसमें आनंद की पर्याय अलग नहीं दिखती। आनंदमय आत्मा, आनंदमय अनुभवता है बस! मय!

भाई! तुझमें तेरा अस्तित्व कितना विशाल है- इसकी तुझे स्वयं ही खबर नहीं है। तू कौन

है? तू कौन है, वह तुझे पता नहीं है। आहाहा! तू कौन है इसका तुझे पता नहीं है। कितना अंधेरा! **तीन लोक के अनन्त द्रव्य- द्रव्य-गुण-पर्याय त्रिकालवर्ती जो अनंतानंत हैं, उन सबको जाननेवाली तेरी ज्ञान की दशा- वह वास्तव में तेरा ज्ञेय है।** अर्थात् ज्ञान की पर्याय ज्ञेय है, वास्तव में! परंतु जो जानने में आते हैं, छह द्रव्य, वे तेरे ज्ञेय नहीं हैं। बहन! निकाल दिया, छह द्रव्य ज्ञेय नहीं हैं। किन्तु छह द्रव्य जिसमें जानने में आते हैं वह ज्ञान, कि जिस ज्ञान में आत्मा जानने में आता है।

यह ज्ञान की बात है, अज्ञान की बात (नहीं)। अज्ञान में आत्मा भी नहीं जानने में आता और अज्ञान में छह द्रव्य भी नहीं जानने में आते। ज्ञान में आत्मा जानने में आता है, अतः छह द्रव्य जानने में आते हैं- ऐसा कहा जाता है। किन्तु जिस ज्ञान में आत्मा जानने में नहीं आता उसमें ज्ञान नहीं है, तो ज्ञान नहीं है तो छह द्रव्य जानने में नहीं आते। अज्ञान में जानने में नहीं आते, ज्ञान में जानने में आते हैं। जानने में आते हैं फिर भी उन्हें जानता नहीं है, आहाहा! उनके ऊपर लक्ष नहीं है न ? जानने में आते हैं सभी लेकिन उनके ऊपर लक्ष नहीं है, आहाहा!

मुमुक्षुः- उसे इतना ही चाहिये। स्वयं और स्वयं की ज्ञान की पर्याय।

उत्तरः- बस! इतना ही है। दूसरा बाहर में कुछ है नहीं। बाहर में कहीं जाने जैसा है नहीं, बस! अंदर में आ जाये न? तो उसका जल्दी काम हो जाये। वास्तव में तेरा ज्ञेय तो तेरी ज्ञान की पर्याय है। जिस पर्याय में छह द्रव्य जानने में आते हैं वे ज्ञेय नहीं हैं तेरे । **न केवल वह दशा , किन्तु तेरे द्रव्य-गुण-पर्याय वे सभी ज्ञेय हैं।** अब देखो, खुलासा किया कि ज्ञान की पर्याय ही ज्ञेय (है) ऐसा तुझे कहा लेकिन केवल ज्ञान की पर्याय ज्ञेय नहीं है। तेरा आत्मा, द्रव्य, गुण और पर्याय - तीनों अभेद होकर ज्ञेय है। यह तो तुझे समझाने के लिये कहा कि तेरी ज्ञान की पर्याय ज्ञेय है, छह द्रव्य ज्ञेय नहीं हैं। उनका (छह द्रव्य का) निषेध करने (के लिये) ज्ञान की पर्याय को ज्ञेय कहा, किन्तु ज्ञान की पर्याय ही ज्ञेय नहीं होती, परंतु अभेद पूरा आत्मा। द्रव्य-गुण से पर्याय में परिणमा हुआ संपूर्ण आत्मा - वह ज्ञेय है। पूरा आत्मा, वह ज्ञेय है। **वह सभी ज्ञेय है, आहाहा ! उन समस्त का (-अपना) ज्ञान वह ज्ञान, वे समस्त (-स्वयं) ज्ञेय और स्वयं ज्ञाता- ये तीनों वस्तुएं एक ही हैं।** वस्तु आत्मा ही है वे तो। ज्ञान भी आत्मा, ज्ञेय भी आत्मा और ज्ञाता भी आत्मा। आत्मा से भिन्न धर्म नहीं हैं ये, एक ही हैं। **तीन भेद नहीं हैं।** तीन भेद नहीं हैं। **ऐसी सूक्ष्म बात! ज्ञान-ज्ञाता-ज्ञेय तीनों भावों सहित वस्तुमात्र स्वयं एक है।** चलो अब पांचवा पेज कल लेंगे। थोड़ी थकान लग रही है।

मुमुक्षुः- बहुत सुंदर। मजे की बात आती है।

उत्तरः- बहुत अच्छी बात आती है।

मुमुक्षुः- और समझ में आ रही है।

उत्तरः- और समझ में आ जाती है, वह दिखता है। हमें भी ऐसा दिख रहा है कि तुम्हें समझ में आ रहा है इतना अच्छा है। नहीं तो यह समझना बहुत कठिन है। यह जो विषय है न? यह विद्वानों को नहीं बैठता, गले नहीं उतरता!